यथार्थ का अर्थ,परिभाषा व रूप

Dr. Lajvanti

Department of Hindi
Haryana

सार

विश्व की किसी भाषा के साहित्य का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य में कभी जीवन की वास्तविक स्थिति का चित्रण अधिक प्रबल रहता है तो कभी भावना पक्ष अधिक प्रबल हो जाता है । साहित्यकार समाज को जैसा देखता है उसको किसी रूप में चित्रित करने का प्रयास करता है तो उसे यथार्थ कहते हैं । समाज के सच को ज्यों का त्यों चित्रण करने वाला साहित्यकार ही यथार्थवादी होता है ।

परिचय

प्रत्येक युग में यथार्थ की धारणा को समझने का प्रयास किया जाता रहा है । इस कारण यथार्थ संबंधी दृष्टि में निरन्तर परिवर्तन आते रहे हैं। यथार्थ शब्द का व्यत्पत्तिपरक अर्थ है – उचित ठीक वाजिब, ज्यों का त्यों, जो जैसा है, यथार्थ अव्ययीभाव समास है जिसका विग्रह है ''अर्थम अनतिक्रम्य'' अर्थात ''अर्थ का अर्थम अतिक्रमण न करना यथार्थ है । हिन्दी में यथार्थ शब्द अंग्रेजी के realy का अनुवाद है । इस प्रकार यथार्थ का संबंध समाज में विद्यमान वास्तविकता से है ।

साहित्य में कल्पना का पक्ष प्रबल होने पर भी वास्तविकता विद्वमान रहती है । साहित्यकार केवल कोरी कल्पना के बल पर ही साहित्य का निर्माण नहीं कर सकता उसे वास्तविक स्थिति का ज्ञान होना चाहिए ।

किसी भी साहित्यकार के लिए यथार्थ का चित्रण करना जटिल कार्य है। ज्यों का त्यों चित्र उतारना तो केवल कैमने के द्वारा ही संभव है। साहित्यकार अपने लेखन के माध्यम से समाज का ज्यों का त्यों रूप चित्रत करता है । समाज निरन्तर गतिशील है । समाज के देखने व समझने के दृष्टिकोण में निरन्तर परिवर्तन आता रहता है, इस प्रकार यथार्थ का स्वरूप भी बदलता रहता है ।

यथार्थ की परिभाषाएँ :

भारतीय परिभाषाएँ :

1. **प्रेमचन्द्र के अनुसार :**

"यथार्थवाद में हमारी दुर्बलताओं, हमारी, क्रूरताओं का नग्नचित्र होता है और इस तरह यथार्थवाद हमको निराशावादी बना देता है, मानव चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है, हमको अपने चारों तरफ बुराई ही बुराई नजर आने लगती है ।''

2. **जयशंकर प्रसाद के अनुसार :**

''यथार्थवाद की विशेषताओं में प्रधान है लघुता की और साहित्यिक दृष्टिपात । उसमें स्वभावतः दृःख की प्रधानता और वेदना की अनुभूति आवश्यक है । लघुता से मेरा अभिप्राय है, साहित्य के माने हुए सिद्धांत के अनुसार महत्ता के काल्पनिक चित्रण से अतिरिक्त व्यक्तिगत जीवन के दुःखों और अभावों का वास्तविक उल्लेख ।''

3. **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी :**

''कला–क्षेत्र में यथार्थवाद एक ऐसी मानसिक प्रवृत्ति है जो निरंतर अवस्था के अनुकूल परिवर्तित और रूपायित होती रहती है ।

4. **गजानन माधव मुक्तिबोध के अनुसार :**

''बाल्यकाल से ही मनुष्य बाहह्य संसार का अनवरत आम्यंतरीकरण करता रहा है और इस प्रकार वह उस अश्यतंरीगृत बाह्य को उन विशेषताओं से समन्वित और संपादित करता है जो उसके 'स्व' की विशेषताएँ हैं ।''

पाश्चात्य की परिभाषाएँ :

1. **एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के अनुसार :**

''यथार्थवादी लेखक वह है जो सुन्दर वस्तुओं पर लिखना पसंद नहीं करता वरन, उनके बदल गंदी घिनौनी चीजों का ही वर्णन करता है। वह टाइप के बदले व्यक्तियों का चित्रण करता है और यथातथ्य चित्रण में विश्वार करता है ।''

2. **कार्लमार्क्स के अनुसार :**

''यथार्थवाद मेरे विचार से व्यापक वास्तविकता के साथ साथ प्रतिनिधि पात्रों को प्रतिनिधि परिस्थितियों में प्रस्तुत करता है ।''

3. **लेनिन के अनुसार :**

''यथार्थवाद वह पद्धति है जो साहित्य को शक्तिशाली बनाती है । समाज की यथार्थ दशा से परिचत होकर हम यह समझने में समर्थ हो जाते हैं कि कौन–कौन से तत्व हमारे समाज को विकासशील बना रहे हैं, जिन्हें और प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है और कौन उसे ह्रासशील बना रहे हैं, जिनका संगठित रूप से निराकरण होना चाहिए ।''

4. **जार्ज लुकाय के शब्दों में :**

''सच्चे यथार्थवादी साहित्य की यह प्रमुख विशेष्ता है कि लेखक बिना किसी भय अथवा पक्षपात के ईमानदारी के साथ जो कुछ भी अपने आस पास देखता है उसका चित्रण करे।''

5. **गोर्की के अनुसार :**

यथार्थवाद से तात्पर्य ''व्यक्तियों और उसके जीवन की परिस्थितियों'' का सच्चा, कोरा मिश्रण से है ।

6. **चेखव के अनुसारः**

''यथार्थवाद केवल बाह्य जगत का अनुकरण नहीं करता वरन् वह उच्चतर उद्देश्यों से प्रेरित होता है यद्यपि कलाकार आदर्शों के प्रति अपने आकर्षण को खुलकर प्रकट नहीं करता ।''

उपर्युक्त परिभाषाएँ स्पष्ट कर देती हैं कि यथार्थ संबंधी दृष्टिकोण साहित्य का वह बुनियादी तत्व है जो जीवन की गतिशीलता व व्यापकता को, सथाम्यों आदर्शों, कल्पनाओं को साथ लेकर चलता है और इस प्रकार जीवन का आन्तरिक व बाह्य उद्घाटन करता है ।

यथार्थ के विविध रूपः

साहित्य में यथार्थवाद को सबसे पहले अरस्तु के विचारों को मान्यता प्राप्त है क्योंकि उन्होंने प्लेटो के आदर्शवाद का विरोध किया और साहित्य को प्रकृति का अनुकरण करने वाला माना है । भौतिक व लौकिक जगत के अनुकरण को यथार्थवाद माना गया है परन्तु अरस्तु की विचारधारा सोद्देश्य नहीं थी इस कारण यथार्थवाद का आरम्भ यहाँ से नहीं माना जा सकता है । यथार्थ के स्वरूप का निर्धारण करने के लिए हमें इसकी विभिन्न विचारधाराओं का विश्लेषण करना होगा ।

यथार्थवाद :

उन्नीसवीं व बीसवीं शताब्दी के कुछ उपन्यासकारों ने यथार्थवाद व प्रकृतवाद का एक साथ प्रयोग किया । जिस कारण यथार्थवाद व प्रकृतवाद में सीमा रेखा निश्चित कर पाना एक कठिन कार्य है । ये प्रायः एक दूसरे का रूप धारण करते हैं । प्रमुख यथार्थवादी लेखक जैसे गोरियर, बालजाक, फलावेयर का प्रमुख उद्देश्य जीवन के सभी पक्षों का यथातत्य निरूपण करना था । इन लेखकों ने अपने साहित्य में ऐसे समाज का चित्रण किया है जो शोषित वर्ग का शोषण कर रहा था । इस कारण इनकी सहानुभूति उस वर्ग के साथ थी जो समाप्त होने जा रहा था। इन यथार्थवादी साहित्यकारों ने अपने समय के समाज का यथार्थ चित्रण किया । इनकी सीमा यह थी कि उस कटुता व दुःख को सहन करने के सिवाय इनके पास कोई अन्य उपाय नहीं था । इस कारण इनका स्वर, निराशा व पलायन का स्वर है। वे बुर्जुआ समाज से घृणा करते थे परन्तु वे उस समाज के स्थान पर दूसरा समाज स्थापित करने की कोशिश नहीं कर पाये। यही उनकी बुनियादी कमजोरी थी । बाद में ये साहित्यकार यथार्थ को यथातथ्य रूप में ग्रहण करने के कारण यांत्रिक भौतिकवाद के जाल में फंस जाते हैं । इस यांत्रिक जड़ता के कारण यथार्थवाद में ठहराव व स्थिरता आ गई जिसके कारण साहित्य में केवल गंदगी कुरूपता, सीलन भरे वातावरण को स्थान दिया जाने लगा । इन साहित्यकारों की सामाजिक संबंधों के प्रति भी रूचि नहीं थी । गोर्की ने इसकी आलोचना करते हुए कहा है – 'यथार्थवाद का यह रूप समाजवादी व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक नहीं हो सका और न वह हो सकता था, क्योंकि या तो इसने सबकी आलोचना करते हुए किसी को भी प्रतिष्ठित नहीं किया और या अपनी निरन्तर अवस्थाओं में यह उन सब बातों के समर्थन पर उतर आया, जिनका स्वयं उसने पहले विरोध किया था ।''

प्राकृतवाद :

यथार्थवाद का विकास आगे चलकर प्रकृतवाद के रूप में हुआ । प्रकृतवादी की यह मान्यता है कि मनुष्य अपनी सहज वृत्तियों, भाव वेगों और परिवेश द्वारा नियंत्रित होता है ।

जेला ने कहा ''उपन्यासकार को एक वैज्ञानिक होना चाहिए । वह नैतिक रूढ़ियों और कला के प्रति उदासीन रहे।'' नैतिकता के प्रति उदासीनता का महत्वपूर्ण कारण था, उस समय मध्य युगीन धार्मिक अधिपत्य में आवश्यकता से अधिक नैतिक प्रतिबंधों ने कला को उद्देश्य–विहीन बना दिया था । सामंत वर्ग कला का प्रयोग अपने स्वार्थ के लिए

करने लगे थे । इस कारण गोटियार ने एक नवीन दृष्टि को जन्म दिया जिसको आगे चलकर कान्ट जैसे दार्शनिकों का समर्थन प्राप्त हुआ वह प्राकृतवाद थी । जोला इसी के समर्थक थे । जोला के उपन्यासों में नैतिकता की प्रतिष्ठिता का अर्थ वैज्ञानिक सत्य का विकृत रूप है । साहित्य में नैतिकता की उपेक्षा की जाने लगी । मानव स्वभाव की निम्नतम प्रवृत्तियों का चित्रण साहित्य में किया जाने लगा । साहित्य को केवल अनावश्यक गंदगी के चित्रण तक ही सीमित समझा जाने लगा । जीवन की समस्याओं की तरफ तो प्रकृतिवादी ध्या नही नहीं देते थे । वे इन समस्याओं का हल नहीं करना चाहते थे । उनके अनुसार जो चीजें जैसी हैं, वैसी ही हैं । उसे सुधारने की कोई आवश्यकता नहीं । इस पर लक्ष्य कर आदर्शवादी कहते हैं :– ''उन्होंनें हमें एक नया संसार देने का वचन दिया था । इसके बदले में उन्होंने हमें एक अस्पताल दिया।'' प्रकृतवाद एक संकीर्ण विचारधार को लेकर चल रहा था । इस कारण फास्ट ने प्रकृतवाद यथार्थ से पलायन की संज्ञा दी । प्रकृतवादी ने कल्पना व संवेदना दोनों का विरोध किया । उनके लिए महत्वपूर्ण यथार्थ नहीं कलाकार पर पड़ने वाला उसका प्रभाव था ।

अतियथार्थवाद :

फ्रांस में 1616 में आंद्रे ब्रेतों ने इसका प्रतिनिधित्व किया । अयिथार्थवाद अचेतन के जगत से संबंधित था । फ्रायड के स्वप्न सिद्धांत से यह अधिक प्रभावित था । ब्रेतों ने लिखा है – ''स्वप्न और यथार्थ ये दोनों परस्पर विरोधी अवस्थाएं प्रतीत होती हैं, किन्तु मैं इनके एकीकरण में विश्वास करता हूँ । मैं समझता हूँ कि निरपेक्ष यथार्थ – अतियथार्थ में परिवर्तित हो सके हैं ।'' आंतरिक व बाह्य यथार्थ के विरोधी को दूर करने के लिए अतियथार्थवादियों ने इन दोनों को संश्लेषण द्वारा एक रूप करने पर बल दिया है । अतियथार्थवादी आंदोलन की प्रमुख विशेष्ता इसकी नष्ट करने की प्रवृति है । इसने सभी प्रकार की सत्ताओं को नष्ट करने का प्रयास किया । इसका लक्ष्य नहीं था । इस प्रवृत्ति के सामने कोई उद्देश्य नहीं था । इस कारण इसे सपने में बड़बड़ाने के अतिरिक्त कुछ और नहीं समझा जा सकता । ये अपनी हठधर्मता व अतिवाद के कारण अपने विनाश का कारण बने ।

मनोवैज्ञानिक यथार्थ :

मनोवैज्ञानिक मस्तिष्क के तीन विभा मानते हैं :– चेतन उपचेतन और अवचेतन । ये अवचेतन को चेतन व उपचेतन से अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं । ये चेतन को कार्यकलापों का जिम्मेदार नहीं अपितु अब चेतन को जिम्मेदार मानते हैं । मनुष्य के समस्त क्रियाकलापों का जिम्मेदार अवचेतन ही है । सह सभी क्रियाकलापों पर नैतिक बंधन भी लगाता है । मनोवैज्ञानिक इलायचन्द्र जोशी लिखते हैं – ''आधुनिक मनुष्य ने सभ्यता के ऊपरी संस्कारों के लेप से अपने मन में अवश्य सफेदपोशी कर ली है, पर जिस परदे पर वह सफेदपोशी की गई है वह इतना झीना है कि जरा–सी बात में फट जाता है और उसमें तनिक भी छिद्र पैदा होते ही उसके नीचे दबी पड़ी पशु प्रवृत्तियों को जितने जोर से सभ्य–मनुष्य नीचे दबाता है उतने ही प्रवेग से वह रबर की गेंद की तरह ऊपर उछाल कारने लगती है । मानव के अवचेन में कुछ आदिम वासनाएँ होती हैं । एडलर इन्हें हीनता की भावना, फ्रायड इन्हें यौनवासनाएँ जुंग इन्हें जीवनेच्छाएँ कहता है । ये वासनाएँ उदण्ड होती हैं । चेतन मन इन वासनाओं को सामाजिक बंधन होने के कारण दबाता रहता है। बन्धन के कारण ये वासनाएँ ग्रंथियों का रूप धारण कर लेती हैं । यही अवसर मिलने पर चेतन अवस्था में आ जाती है ।

मनोवैज्ञानिक यथार्थवादी लेखक मनुष्य के बाहरी कार्य–व्यापारों को भूल गया । इस कारण ये वर्ग व्यक्तिवादी होता चला गया । ये वर्ग ग्रन्थियों को सुलझाने को ही अपना कर्त्तव्य समझने लगा । डॉ. रामविलास शर्मा के अनुसार – ''जो मनोविज्ञान समाज को छोड़ कर व्यक्ति के अंतर्मन का विश्लेषण करने का प्रयत्न करता है, वह अपने विज्ञान को पहले ही अवैज्ञानिक करार दे देता है । इस यथार्थवाद की दिशा अंतर्मुखी थी । मानव के व्यक्तित्व का निर्माता अंतर्जगत की कमजोरियों को मानना एक प्रकार से मानव के व्यक्तित्व व गौरव का हनन था ।

समाजवादी यथार्थवाद :

मार्क्सवादी दृष्टिकोण ने यथार्थवाद को व्यापक अर्थ प्रदान किया । मार्क्सवाद से प्रेरित यथार्थवादी लेखकों को सामाजिक यथार्थवादी कहा गया। मार्क्स ने यथार्थवादी दृष्टिकोण को साहित्यकार के लिए आवश्यक बताया । मार्क्स के अनुसार – ''साहित्यकार की चेतना समाज सापेक्ष होती है। इस प्रकार जो साहित्य यथार्थवाद को छोड़कर चलता है वह कभी प्रगति नहीं कर सकता है । सत्ताधारी वर्ग जनता की स्वतन्त्रता को भंग करता व उसकी आर्थिक दशा व संस्कृति पर अपना नियन्त्रण स्थापित कर लेता है । इस कारण जनता उसके विरूद्ध संघर्ष करती है । एक अच्छे साहित्यकार का उद्देश्य इस संघर्ष को विकसित करना है ।

यह मानवतावादी आदर्शों को लेकर चलता है । ये मानता है कि जब तक शोषक व शोषित का सम्बन्ध आपस में बना रहेगा तब तक मानवता की स्थापना नहीं हो सकती है ।

स्माजवादी यथार्थवाद की एक महत्त्वपूर्ण विशेष्ता कला की सोद्देश्यता है। ये मानते हैवं कि साहित्य व कला का मूल उद्देश्य मानव की चेतना को विकसित करना व समाज की व्यवस्था को सुधारना है । यह तभी पूर्ण हा सकता है जब साहित्यकार ऐसे साहित्य का निर्माण करे जिसमें उसको विश्व परिवर्तन की प्रेरणा मिले । श्रमिक वर्ग की उन्नति हो। लेनिन ने साहित्य की सोद्देश्यता पर बल देते हुए उसे पार्टीजन होने को कहा है । पार्टीजन का अर्थ यहाँ पार्टी के नियमों से नहीं है । उनका तात्पर्य साहित्य को जनता के लिए जनता की स्थितियों का स्पष्ट चित्रण करने से है । लेनिन के अनुसार साहित्य केवल अमीर लोगों के लिए नहीं, बल्कि उन करोड़ों श्रमिकों के लिए होना चाहिए जो राष्ट्र के सेवा में दिन रात लगे रहते हैं । जो देश का भविष्य हैं । मार्क्स ने साहित्य में प्रचारात्मकता का घोर विरोध करते हुए कहा है कि ''लेखक को अपने विचार दूसरों पर थोपने नहीं चाहिएं ।

स्माजवादी यथार्थवाद की एक महत्वपूर्ण विशेषता लोकमंगलकारी भावना है । कई बार यह भ्रम हो जाता है कि समाजवादी यथार्थवाद को मानने वाले साहित्यकार सामाजिक समस्याओं के सामने मानव अनुभूतियों को निम्न स्थान देते हैं । परन्तु यह उचित नहीं है । डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं – ''यथार्थवाद को सीमित अर्थ में लेना अनुचित होगा । उसमें सामाजिक समस्याओं के चित्रण के अलावा प्रकृति चित्रण भी हो सकता है। संघर्ष के चित्रण के अलावा प्रकृति चित्रण भी हो सकता है, संघर्ष के चित्रण के अलावा प्रेम के मुक्तक भी लिखे जा सकते हैं ।'' इसके लिए आवश्यक यह है कि साहित्य में जो भी भावना आये, वह समाज में उपस्थित हो । सामान्य जन जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाली हो ।

सही यथार्थ दृष्टि :

यथार्थ के विविध रूपों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि फ्रांसीसी आंदोलन का यथार्थवाद, प्रकृतवाद, अतियथार्थवाद, मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद यथार्थ के सही दृष्टिकोण से पलायन कर गए । केवल समाजवादी यथार्थ की दृष्टि सच्चे अर्थों में प्रगतिशील है । किसी भी लेखक की कृति का मूल्यांकन इस आधार पर किया जा सकता है कि उसने अपने समय के सामाजिक संघर्षों को कहाँ तक समझा है । समाजवादी यथार्थ अपने में पूर्ण दृष्टि है । यह यथार्थ के विकास में सबसे अधिक समर्थ वैज्ञानिक और मानवतावादी विचारधारा है । इस कारण यह सबसे अधिक मान्य है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ममता कालिया — ममता कालिया की कहानियाँ
   वाणी प्रकाशन, 21–ए, दरियागंज,
   नयी दिल्ली–110002, संस्करण–2008
2. शशिबाला शर्मा — मुक्तिबोध की कविता में यथार्थबोध
   संस्करण प्रथम
   प्रकाशन – प्रवीण शर्मा
   अशोक विहार, दिल्ली–110052
3. राजकुमार सैनी — यथार्थवाद और सौन्दर्य शास्त्र
   प्रकाशक – टाइम बुक्स, 512–बी, गली न0 1,
   विश्वास नगर, औद्योगिक क्षेत्र, दिल्ली–110032
   मुद्रक कम्पीटेंट प्रिंटर्स, दिल्ली–110032
4. श्री नारायण सिंह — बीसवीं शताब्दी, हिन्दी उपन्यास : नए दो पहलू
   लोकवाणी प्रकाशन, डी–15, सिनेमा ब्लाक,
   कृष्ण नगर, दिल्ली–110051, प्रथम संस्करण, 1976
5. सुमित्रा त्यागी — हिन्दी उपन्यास, आधुनिक विचारधाराएं,
   साहित्य प्रकाशन, मालीवाड़ा, दिल्ली–110006
   प्रथम संस्करण, 1978
6. तीर्थेश्वर सिंह — समकालीन हिन्दी कविता की यथार्थवादी चेतना ।
   मानसी पब्लिकेशन, 4637/20, मनीष प्लाजा,
   124–प्रथम तल, अंसारी रोड़, दरियागंज,
   दिल्ली–110002, प्रथम संस्करण–2006